International Conference on
Women's Empowerment, Laws, Feminism,
Gender Discrimination, Gender Space and Women's Leadership:
Issues and Challenges in 21st Century (Naareevaad - 2019)

मध्यस्थ दर्शन के संदर्भ में महिला – पुरुष की समानता का अध्ययन

(The Study of Male-Female Equality in the Context of Intermediary Philosophy)

Dr. Hina Chawda

Faculty of Value Education & Psychological Counsellour
Department of humanities and Social Sciences
National Institute of Technology, Raipur C.G. India

सारांश – मध्यस्थ दर्शन सह–अस्तित्ववाद के अनुसार मानव पद में नर–नारी दोनों समान हैं और मध्यस्थ दर्शन में मानववाद स्पष्ट है। इसमें मानव को शरीर चेतना को बनाए रखकर जीवन क्रिया की स्पष्टता के आधार पर यर्थात को अध्ययन गम्य कराया गया है। "मनाकार को साकार करने वाला व मनःस्वस्थता का आशावादी मानव है।"

स्त्री के बिना परिवार की कल्पना संभव ही नहीं है। इस बात की स्वीकृति ही महिला सशक्तिकरण का प्रमुख आधार है।

- उत्पादन और परंपरा के लिए आवश्यकता को महिला के बिना निर्धारित किया जाना संभव नहीं है। आवश्यकता के साथ उपयोग, सदुपयोग व प्रयोजन का निर्धारण भी संभव नहीं है। इस विधि से महिला के होने व रहने की आवश्यकता स्वयं सिद्ध है, यही महिला सशक्तिकरण हैं। ज्ञान, विवेक, विज्ञान से ही स्त्री सषक्तिकरण की सूत्र व्याख्या होगी, जिसको मध्यस्थ दर्षन सह–अस्तित्ववाद स्पष्ट करता है।
- मानव परंपरा में ही संस्कृति होती है व स्त्रियों के वगैर क्या कोई संस्कृति आकार ले सकती है। यदि नहीं, तो होने व रहने के अर्थ में महिला का समानाधिकार होता ही है, यही महिला सशक्तिकरण है।
- स्त्री और पुरुष में समानता की सूत्र व्याख्या ही स्त्री सशक्तिकरण है।

1 परिचयः

तमाम ऐतिहासिक, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थितियों के अध्ययन से स्पष्ट है कि स्त्री की स्थिति परिवार से लेकर सभी जगह दोयम दर्जे की है। कहीं उसे माँ के रूप में सम्मान है तो कहीं पत्नी व पुत्री के रूप में उपेक्षा का शिकार होना पड़ा। परम्परायें और विधि जिनका निर्माता पुरुष है उसने भी अपने को सुविधा में रखते हुये ही नियम बनाये व स्त्रियों को अपने नियंत्रण में रखा– जैसा कि नारीवादी विमर्श में लिखा है कि आदमी की निगाह में स्त्री का क्या बिम्ब है, अस्तित्व है, इस प्रश्न के माध्यम से ही हम समाज में स्त्री की स्थिति को समझ सकते हैं कि पुरुष उसको क्या समझता है? पुरुष की निगाह में वह क्या है? उसका क्या स्थान है? कितना स्थान है? उसे कितने समान अधिकार मिले हैं? अथवा वह दोयम दर्जे की ही वस्तु है? स्त्री–पुरुष के बीच के फासले क्यों नहीं गिर, मिट सके? सामाजिक सरंचना और संवैधानिक धाराओं के बीच इतने तीखे प्रचंड विरोधाभास क्यों हैं? वे क्यों नहीं मिट सके? (नारीवादी विमर्श, पृष्ठ 162)

पुरुष द्वारा उसको अपने हानि–लाभ के आधार स्त्री की भूमिका का निर्धारण किया गया। अभी समूची मानव जाति प्रिय, हित, लाभ के आधार पर जीती है। न्याय, धर्म, सत्य की पहचान के लिये मानव जाति प्रयासरत है। अभी वह एकमत नहीं है। विभिन्न धर्मग्रंथों के आधार पर स्त्री की प्रस्थिति को देखें तो पायेंगे कि आपस में उनमें कई जगहों पर अस्पष्टता है व परस्पर विरोध है।

स्त्री ने हमेशा शांतिपूर्ण कार्य ही किये हैं। युद्ध में सर्वाधिक पुरुष ही आज भी भाग लेते हैं। स्त्रियों की सहभागिता न्यूनतम है

पर जब कभी अपनी पहचान के लिये उसे विद्रोह करना पड़ा हो या सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तनों के आंदोलन हो उसने अपनी प्रतिभा का परिचय हर क्षेत्र में दिया है।

स्त्री की स्थिति को परिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, नतृत्व विज्ञानी, साहित्यिक आदि आधारों पर गंभीर पड़ताल की आवश्यकता बनी हुई थी, जिसके अभाव में स्त्री आंदोलन आज तक निश्चित दिशा व गति नहीं ले पाये थे और महिलाओं की स्थिति को सुधारने के कितने ही प्रयास उसे अच्छी स्थिति तक पहुँचाने में कमतर जान पड़े। जो स्त्री को स्वयं से उसकी एक मानव के रूप में पहचान करा सके व परिवार व समाज में उसकी भूमिका का समुचित मूल्यांकन करा सकें।

पुस्तकों, कहानियों, धर्मग्रन्थों आदि सभी में शाब्दिक रूप से तो स्त्री की स्थिति को पढ़ने पर मन को राहत तो पहुंचती है पर जमीनी सच्चाई पूरे विश्व में लगभग एक जैसी हैं, अतः इस अध्ययन की आवश्यकता महिलाओं के संदर्भ में अत्यावश्यक जान पड़ी। अतः केन्द्र में यह परियोजना प्रारंभ की गई।

भारत के संदर्भ में जब स्त्री का अध्ययन ऐतिहासिक–धार्मिक पृष्ठभूमि के आधार पर किया जाता है तो हम पाते हैं कि स्त्रियों की प्रस्थिति समाज में माता, भगिनी व संस्कारदात्री गुरु के रूप में पहचानी जाती रही है। उसे धार्मिक क्रियाकलाप से लेकर पारिवारिक दायित्वों में गौरवशाली स्थान प्राप्त था। प्राचीन काल से आधुनिक काल में वर्तमान समय तक भारतीय नारी की स्थिति अलग–अलग रूप में भिन्न–भिन्न स्थितियों से गुजरी है। विश्व की विभिन्न संस्कृतियों के निर्माण में नारी का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। किसी भी राष्ट्र की संस्कृति का मुख्य आधार नारी की उस समाज में स्थिति से ही आकलित होता है। सामाजिक मान्यताओं में जैसे–जैसे परिवर्तन होते गये वैसे–वैसे ही नारी की स्थिति में भी परिवर्तन हुये हैं। जिससे नर–नारियों के बीच वैचारिक दूरियां बढ़ती गईं। यही पारिवारिक ढ़ांचे के क्षतिग्रस्त होने का मूल कारण रहा। 20वीं सदी के मध्य में होने वाले दो विश्व युद्धों ने समूची मानवता को एक बार पुनः अपने सभ्य होने व सभ्य दिखने के अन्तर को स्पष्ट किया। 21वीं सदी के आरंभ काल में मानव अधिकार के संदर्भ में स्त्रियों की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक स्थिति पर चिंतन प्रारम्भ हुआ, जबकि सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक ध्रुवीकरण नहीं हुआ जिससे व्यक्तिवाद, समुदायवाद और उपभोक्तावाद पनपता रहा।

स्त्री अध्ययन भी 20वीं सदी के मध्य उपजी मानवीय सोच व उसकी पहचान के प्रयास की एक कड़ी है। अतः स्त्रियों की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, साहित्यिक, पारिवारिक स्थितियों की पड़ताल करने से पहले यह आवश्यक है कि यह जान लिया जाय कि स्त्रियों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या थी, क्योंकि वर्तमान के बीज हमेशा अतीत में निहित होते हैं और भविष्य के बीज वर्तमान में। अतः यह अत्यंत आवश्यक था कि ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में स्त्रियों की प्रस्थिति का अध्ययन किया जाये।

भारतीय संदर्भ में जब स्त्री की प्रस्थिति का अध्ययन विभिन्न धार्मिक ग्रंथों के आधार पर होता है तब स्थितियां बड़ी ही अस्पष्ट नजर आती हैं। किसी भी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई ठोस आधार नहीं मिलता। हिन्दू समाज में जहां एक ओर उनके प्रति सम्मान व्यक्त किया गया और उन्हें परिवार का आधार बताया गया है, वहीं, अनेक जगहों पर उसे पुरुष से निम्न स्थिति में रखा गया है, वही उसे केवल जननी के रूप में माना गया।[1]

'स्त्री एक मानव' अवधाणात्मक अध्ययन के क्रम में ऐतिहासिक स्थितियों का अध्ययन धार्मिकता के आधार पर किया गया और पाया कि विश्व के लगभग सभी धर्मग्रंथों में स्त्री–पुरुष भेद के आधार पर ही सारे नियम, आचार संहिताएं और व्यवस्थाएं बनी हैं, इनसे मानवता और मानवीय व्यवस्था का प्रकाशन होगा ऐसा समझ में नहीं आता है। अष्टावक्र गीता में मानव की बात की गई है, परन्तु इसमें भी मानव व मानवता स्वयं में स्पष्ट नहीं है। सिक्ख धर्म में महिलाओं की स्थिति को पुरुषों के समकक्ष भी रखा गया है, पर जमीनी सच्चाई इतने वर्षों की सिक्ख धर्म की यात्रा के बाद कुछ और ही निकल कर आती है। भारतीय परिवारों की संरचना में स्त्रियों की स्थिति सभी कालों में लगभग एक जैसी रही है। कम–ज्यादा के अंतर से वास्तविकता को व्याख्यायित नहीं किया जा सकता है। समूची मानवता जब तक सही की समझ से सम्पन्न नहीं होगी और मानव की पहचान न्याय, व्यवस्था के अर्थ में भागीदारी व जिम्मेदारी के साथ नहीं होगी तब तक समूची मानवता को कोई राहत प्राप्त होगी, ऐसा दिखाई नहीं पड़ता है।

ISBN-978-93-85822-95-7

स्त्री की शरीर रचना व देह दृष्टिकोण के साथ स्त्री का अध्ययन किया गया तो पाया कि स्त्री केवल शरीर के आधार पर व्याख्यायित नहीं होती है और पुरुष भी केवल शरीर के आधार व्याख्यायित नहीं होता है। अतः जब हम समाज के दृष्टिकोण को समझने जाते हैं तो पाते हैं कि सत्ता व शासन की जो दृष्टि मानव जाति को आज तक संचालित कर रही है उसे बदले जाने की महती आवश्यकता है। मानवीय दृष्टिकोण न्याय, धर्म व सत्य के उन अर्थों में समझने की जरूरत है जिससे मानवीयता का पोषण और संरक्षण होता है, न कि शोषण, जैसा कि वर्तमान में दिखाई पड़ता है।

2 अध्ययन का निश्कर्षः

विभिन्न राजनीतिक तंत्रों में स्त्री की स्थिति के अध्ययन में पाया कि मानव में जब तक मानवीय समझ की पहचान नहीं होगी तब तक सारे तंत्र भी मानवीय समझ के आभाव में केवल कल्पनाओं व शुभाकांक्षाओं के आधार पर विकसित होते है। परिणामतः राजनीतिक तंत्र अपनी उन मानवीय आकांक्षाओं को मूर्तरूप नहीं दे पाये, जिन मानवीय आकांक्षाओं के प्रयास में ये तंत्र विकसित हुए थे। सभी तंत्र कहीं न कहीं मानवीय दृष्टि की संकीर्णता के कारण तमाम प्रश्नों से घिरे में हैं और उनके समाधान इनके अध्ययन से नहीं निकलते हैं। विभिन्न राजनीतिक तंत्रों में स्त्री के पिछड़ने के पीछे पितृसत्तात्मक मानसिकता और यह भ्रमित मान्यता काम करती रही है कि स्त्रियां तुलनात्मक रूप में पुरुषों से शारिरिक व बौद्धिक रूप में पिछड़ी होती है। लेकिन, जैसे–जैसे राजनीतिक तंत्रों में स्त्री की भागीदारी बढ़ी तो उन्होंने अपनी प्रतिभा और क्षमता को साबित किया। स्त्री को मानव के रूप में प्रतिस्थापित किये बिना धरती पर सार्वभौम व्यवस्था के सूत्र नहीं खोजे जा सकते है। अखंड मानव समाज, मानव मानसिकता, मानवीय संविधान और मानव केन्द्रित सार्वभौम व्यवस्था के लिए यह जरूरी है कि 'स्त्री को मानव के रूप' में बराबरी का दर्जा प्राप्त हो तथा मानव केन्द्रित आचार संहिता रूपी विधि–व्यवस्था तैयार की जाय। मध्यस्थ दर्शन सह–अस्तित्ववाद मानवता की व्यवस्था के साथ जिस **परिवार मूलक ग्राम स्वराज्य व्यवस्था** की बात करता है उसे और विस्तार से समझे जाने की आवश्यकता उक्त अध्ययन में निकल कर आई है व उक्त अध्ययन मानवीय दृष्टि, मानवीय स्वभाव व प्रवृत्ति के आधार कार्य व योजना देने वाले समाधान को सुझाते हैं।

स्त्री विद्रोहों के स्वरों का अध्ययन किया गया। निश्चित ही स्थितियों को बदलने में और स्त्री की सभी स्तरों पर भागीदारी बढ़ाने में विद्रोही स्वर जरूर कामयाब हुए हैं, लेकिन, स्त्री की एक मानव के रूप में पहचान दिलाने व उसको सम्मानजनक स्थिति में पहुँचाने में विद्रोही प्रयास सफल हुए दिखाई नहीं पड़ते हैं। मध्यस्थ दर्शन सह–अस्तित्ववाद के अनुसार गलती को गलती से, युद्ध को युद्ध से और अपराध को अपराध से रोकने के प्रयास में मानव अपनी नासमझी से द्वंद्व में खड़ा दिखाई देता है। अतः विद्रोही स्वरों निहित प्रत्याशा उस मानवीय समझ से ही पूर्ण हो सकती है जो सह–अस्तित्ववादी अध्ययन मध्यस्थ दर्शन में विश्लेषित है। इसके लिये मध्यस्थ दर्शन की गंभीर पड़ताल व विश्लेषण की आवश्यकता भी उक्त अध्ययन में दिखाई पड़ती हैं, जिसमें मानव के प्रश्नों के समाधानकारी उत्तर हैं।

परिवारों के बदलते स्वरूप और पितृसत्तात्मक प्रवृत्ति के बीच स्त्री की एक मानव के रूप में भूमिका के अध्ययन में पाया कि स्त्री ने अपनी भूमिका के निर्वाह के प्रयास में भले ही जिम्मेदारी का परिचय दिया हो, लेकिन स्वयं की पहचान की स्पष्टता के अभाव में परिवार में वह न तो अपनी मानव के रूप स्वयं की पहचान स्थापित कर पायी और न ही अन्य सदस्यों की। इस दुविधा की स्थिति ने उसकी मानव के रूप में भूमिका को आधा–अधूरा ही प्रकट किया है। फिर भी, बदलते स्वरूप में वह परिवार में अपने हस्तक्षेप को सभी स्तरों में दर्ज कराने में सफल रही है। किंतु, मानव की पहचान के अभाव में परिवार संस्था का भविष्य खतरे में दिखाई पड़ता है जो कि मानव के लिए एक ऐसा दृढ़ आधार है जहाँ से वह, चाहे स्त्री हो या पुरुष, परस्पर–पूरकता के साथ जीवन की तमाम स्थितियों का मुकाबला करता है। अतः मानवता की व्यवस्था के इस प्रमुख आधार स्तम्भ को संबंधों व व्यवस्था की मानवीय दृष्टि के साथ समझने की आवश्यकता है।

अतः मानव की व्याख्या के संदर्भ में अलग–अलग अध्ययन अस्पष्ट है और इनमें मानव की स्पष्ट व्याख्या नहीं मिलती है, परम्परागत भरतीय दृष्टियों में भी मानववाद व्याख्यायित नहीं होता है। उक्त अध्ययन क्रम में मध्यस्थ दर्शन सह–अस्तित्ववाद ही मानव की स्त्री–पुरुष के आधार पर नहीं, वरन्, मानव के आधार पर व्याख्या प्रस्तुत करता है तथा स्त्री–पुरुष समानता के समाधान भी सुझाता है। यह अध्ययन न केवल अवधारणा के स्तर पर है, वरन्, मानवीय कार्य, व्यवहार, समझ व व्यवस्था के स्तर पर भी प्रस्तुत है। अतः मानव के मानवीय लक्ष्य – समाधान, समृद्धि, अभय व सह–अस्तित्व, को मध्यस्थ दर्शन सह–अस्तित्ववाद में स्पष्ट किया गया है। मानवता के हित में यह एक आशा है। अतः इस अध्ययन को और अधिक गंभीरता से किये जाने की आवश्यकता स्त्रीवादी अध्ययनों में है।

ISBN-978-93-85822-95-7

स्त्री एक मानव के अवधारणात्मक अध्ययन के लिये दस माह की अवधि काफी कम साबित हुई। इस अध्ययन की संपूर्णता को पाने के लिए इस पर दीर्घ व गहन अध्ययन की आवश्यकता प्रतीत होती है। देश के महिला अध्ययन केन्द्र इस पर आगे गंभीरता से कार्य व विचार कर इस अध्ययन को आगे बढ़ाएंगे ऐसी आशा की जानी चाहिये।

3 महिला सशक्तिकरण दृष्टि से सुझाव

1. स्त्री के बिना परिवार की कल्पना संभव ही नहीं है। इस बात की स्वीकृति ही महिला सशक्तिकरण का प्रमुख आधार है।
2. उत्पादन और परंपरा के लिए आवश्यकता को महिला के बिना निर्धारित किया जाना संभव नहीं है। आवश्यकता के साथ उपयोग, सदुपयोग व प्रयोजन का निर्धारण भी संभव नहीं है। इस विधि से महिला के होने व रहने की आवश्यकता स्वयं सिद्ध है, यही महिला सशक्तिकरण हैं। ज्ञान, विवेक, विज्ञान से ही स्त्री सषक्तिकरण की सूत्र व्याख्या होगी, जिसको मध्यस्थ दर्षन सह–अस्तित्ववाद स्पष्ट करता है।
3. मानव परंपरा में ही संस्कृति होती है व स्त्रियों के वगैर क्या कोई संस्कृति आकार ले सकती है। यदि नहीं, तो होने व रहने के अर्थ में महिला का समानाधिकार होता ही है, यही महिला सशक्तिकरण है।
4. स्त्री और पुरुष में समानता की सूत्र व्याख्या ही स्त्री सशक्तिकरण है।
5. अस्तित्व ज्ञान, जीवन ज्ञान, और मानवीयता पूर्ण आचारण ज्ञान सम्पन्नता से सशक्तिकरण है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

1. कुमार राकेश, नारीवादी विमर्श, आधार प्रकाशन, पंचकूला हरियाणा, 2001
2. कुमार, राधा, स्त्री संघर्ष का इतिहास, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2005
3. सुमन कृष्णकांत, इक्कीसवीं सदी की ओर, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., दिल्ली, वर्ष 2001
4. मुकर्जी, डॉ. रवीन्द्र नाथ, सामाजिक मानव शास्त्र की रूपरेखा, विवेक प्रकाशन दिल्ली, वर्ष 2006
5. आचार्य, वादरायण, मनु स्मृति, डायनेमिक पब्लिकेशन्स, मेरठ,
6. शर्मा, प्रज्ञा, भारतीय समाज में नारी, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, 2001
7. कौशिक, आशा, नारी सशक्तिकरण विमर्श एवं यर्थाथ, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, वर्ष 2004
8. झुनझुनवाला, मधु भरत, महिला आरक्षण, जनवाणी प्रकाशन, दिल्ली, वर्ष 1999
9. व्होरा, आशा रानी, औरत कल आज और कल, कल्याणी शिक्षा परिषद, दिल्ली, वर्ष 2005
10. ए. नागराज, मानव व्यवहार एवं दर्शन, जीवन विद्या प्रकाशन, शहडोल, वर्ष 2003
11. ए. नागराज, मानव कर्म दर्शन, जीवन विद्या प्रकाशन, शहडोल, वर्ष 2003
12. ए. नागराज, व्यवहारवादी समाजशास्त्र, जीवन विद्या प्रकाशन, शहडोल, वर्ष 1999
13. ए. नागराज, आवर्तनशील अर्थशास्त्र, जीवन विद्या प्रकाशन, शहडोल, वर्ष 2001
14. ए. नागराज, मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान, जीवन विद्या प्रकाशन, शहडोल, वर्ष 1998

ISBN-978-93-85822-95-7